|| श्रीहरिः ||
वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम् |
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ||

|| गीता पढ़ें, पढ़ायें, जीवन में लायें ||

|| श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ||

अध्याय 15: पुरुषोत्तमयोग

1/2 (श्लोक 1-5), शनिवार, 09 दिसंबर 2023

विवेचक: गीता विशारद डॉ आशू जी गोयल

यूट्यूब लिंक: https://youtu.be/4yeJNdb4Mu0

ब्रह्माण्ड का स्वरूप और परमात्मा की प्राप्ति

भगवान श्री कृष्ण के चरणों में नमन कर, स्वामी गोविंद देव गिरि जी के आशीर्वाद के साथ, भगवान श्रीकृष्ण की वन्दना और दीप प्रज्वलन के साथ विवेचन सत्र का शुभारम्भ हुआ।

भगवान की अत्यन्त कृपा से हमारा भाग्योदय हुआ है कि हम लोग अपने जीवन को सुफल और सार्थक करने के लिए, इस मानव जीवन का सदुपयोग करने के लिए गीता जी सीखने में, उसका पठन करने में, उसको आत्मसात करने में, उसके सूत्रों को जानने और समझने में और उसे अपने जीवन में लाने के लिए उद्यत हो गए हैं। पता नहीं यह कृपा हमारे इस जन्म के किसी पुण्य के कारण है, पूर्व जन्मों के सत्कर्मों के कारण है, हमारे पूर्वजों के पुण्यकर्मों के कारण है या किसी जन्म में किसी सन्त महात्मा की कृपा हो गई कि हम भगवद्गीता सीखने में लग गए।

हमने गीता जी को नहीं चुना है बल्कि हम इस कार्य के लिए चुने गए हैं। हमें यह लग सकता है कि हमें किसी सोशल मीडिया प्लेटफ़ॉर्म या किसी और माध्यम से गीता सीखने की प्रेरणा मिली लेकिन यह प्रेरणा बिना भगवत कृपा के मिल ही नहीं सकती। हम अगर सौ लोगों को गीता पढ़ने के लिए कहें तो उनमें से चार, पाँच लोग ही गीता पढ़ने के लिए तैयार होते हैं।

श्रीभगवान ने कहा है जो गीता पढ़ता है, वह मुझको प्राप्त हो जाता है। इसलिए यदि सभी गीता पढ़ने लग जाएँ और सभी भगवान को प्राप्त हो जाएँ तो भगवान का बनाया हुआ यह पूरा खेल ही पलट जाएगा। इसलिए भगवान जिन पर प्रत्यक्ष रूप से कृपा करते हैं, उन्हें ही गीता जी को पढ़ने का अवसर मिलता है।

गीता जी के बारे में जब हम महापुरुषों की अवधारणा को देखते हैं तो पाते हैं कि यह सबसे छोटा ग्रन्थ है पर पिछले तिरेपन सौ वर्षों में इसका महात्म्य दिनों दिन बढ़ता ही गया है। आदि शङ्कराचार्य भगवान ने जब गीता जी पर शङ्करभाष्य लिखा तो वह गीता का अप्रतिम भाष्य हो गया।

अल्बर्ट आइंस्टीन कहते हैं **,"I made Geeta my main source of Inspiration."**
अभी परमाणु बम के जनक के नाम पर ओपनहाइमर नाम की एक फिल्म आई थी। जब उन्होंने पहली बार परमाणु बम का परीक्षण किया तो उनके मुख से अनायास ही निकल गया **"दिवि सूर्यसहस्रस्य"**।
भारत के ही नहीं विदेशों के भी कई महापुरुष गीता जी के प्रशंसक हैं। स्वयं महात्मा गांधी जी, बराक ओबामा और आइंस्टीन ने

इस की प्रशंसा की है। इसका कारण यह है कि गीता किसी सम्प्रदाय विशेष के लिए नहीं है।

भारत में हिन्दू धर्म के सभी सम्प्रदायों में गीता के अलावा कोई भी ऐसा ग्रन्थ नहीं है जिस पर सबकी श्रद्धा हो। हर सम्प्रदाय अलग-अलग ग्रन्थों को मानता है। भगवद्गीता ही एक मात्र ऐसा ग्रन्थ है जिसका सभी सम्प्रदाय आदर करते हैं क्योंकि भगवद्गीता किसी सम्प्रदाय को प्रतिपादित नहीं करती। यह न तो यह किसी का खण्डन करती है और न ही किसी का महिमा मण्डन करती है। गीता के कृष्ण किसी विशेष मार्ग के आग्रही नहीं हैं, वे तो केवल मंजिल के आग्रही हैं अर्थात आपने किस मार्ग से और कैसे अपनी मंजिल अर्थात भगवत प्राप्ति की, यह महत्वपूर्ण नहीं है, आप अपनी मंजिल पर पहुँचे या नहीं यह महत्वपूर्ण है। इसलिए जितने भी महापुरुष हैं, उन्होंने गीता को अपना मुख्य पाथेय बनाया।

यह जानकार आश्चर्य होगा कि गीता कोई अलग ग्रन्थ नहीं है। महाभारत के एक लाख श्लोकों में अठारह पर्व हैं, उन अठारह पर्वों में भीष्म पर्व के छब्बीसवें अध्याय से बयालीस अध्याय तक के श्लोकों को निकालकर भगवद्गीता का सृजन किया गया है। यह महाभारत का ही एक भाग है। लेकिन यह इतना शक्तिशाली ग्रन्थ है कि यह हजारों सालों के विजन को दिखाता है।

बारहवें अध्याय में भगवान ने भक्त के उन्तालीस लक्षण बताए । उसमें कहीं भी यह उल्लेख नहीं था कि चोटी रखने वाला, तिलक लगाने वाला, कीर्तन करने वाला भक्त है। भगवान इनके आग्रही नहीं हैं। वे कहते हैं:

अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च ।
निर्ममो निरहङ्कारः समदुःख सुखः क्षमी॥

वे कहते हैं कि यदि किसी में ये सारे उनतालीस लक्षण हैं, वही मेरा भक्त है। ऐसे ही कई लक्षण उन्होंने गीता में कई और अध्यायों में भी दिए। दूसरे अध्याय में उन्होंने **स्थितप्रज्ञ** के लक्षण बताए, बारहवें अध्याय में **भक्त** के लक्षण बताए, तेरहवें अध्याय में **ज्ञानी** के लक्षण बताए, चौदहवें अध्याय में **गुणातीत** के लक्षण बताए, सोलहवें अध्याय में **दैवी और आसुरी** प्रवृत्ति के लक्षण बताए। भगवान कहते हैं कि आप कितना ध्यान करते हो, कितनी देर पूजा करते हो, यह काफी नहीं है। पूजा करने के बाद तुम्हारे अन्दर कोई बदलाव आया या नहीं, यह महत्वपूर्ण है।

पन्द्रहवाँ अध्याय बहुत छोटा है परन्तु अत्यन्त महत्वपूर्ण है। भगवान ने इस अध्याय को शास्त्र की उपमा दी है। इस अध्याय के अन्तिम श्लोक में भगवान कहते हैं कि यह अध्याय शास्त्र है। इस अध्याय में ईश्वर, प्रकृति और जीव तीनों का विश्लेषण किया गया है। इन तीनों से बढ़कर कर कोई नहीं है, इसलिए इसे भगवान ने अपने **पुरुषोत्तम स्वरूप का शास्त्र** भी कहा है। पन्द्रहवें अध्याय की विशेषता यह है कि यदि किसी के पास पूरी गीता पढ़ने का समय न हो, तो केवल इस अध्याय का पठन कर सकता है क्योंकि इस अध्याय को भगवान ने शास्त्र की संज्ञा दी है। इस अध्याय का पठन किसी भी मङ्गल और अमङ्गल दोनों कार्य में कर सकते हैं। चूंकि भगवान ने इस अध्याय में अपने पुरुषोत्तम स्वरूप का वर्णन किया है, इसलिए अध्याय का नाम **पुरुषोत्तम योग** हो गया।

एक रुपक से भगवान इस अध्याय का आरम्भ करते हैं।

15.1

श्रीभगवानुवाच
ऊर्ध्वमूलमधः(श्) शाखम्, अश्वत्थं(म्) प्राहुरव्ययम्।
छन्दांसि यस्य पर्णानि, यस्तं(वँ) वेद स वेदवित्॥15.1॥

श्रीभगवान् बोले – ऊपर की ओर मूल वाले (तथा) नीचे की ओर शाखा वाले (जिस) संसार रूप अश्वत्थ वृक्ष को (प्रवाह रूप से) अव्यय कहते हैं (और) वेद जिसके पत्ते हैं, उस संसार-वृक्ष को जो जानता है, वह सम्पूर्ण वेदों को जानने वाला है।

विवेचन : भगवान कहते हैं कि हे अर्जुन! ये पूरा ब्रह्माण्ड एक पीपल के वृक्ष जैसा है जिसकी जड़ें ऊपर की ओर हैं और इसकी

शाखाएं नीचे की ओर हैं। हम कई बार ऊपर और नीचे से अभिप्राय दिशाओं से कर लेते हैं लेकिन ऊपर और नीचे का अर्थ सदैव दिशाओं से नहीं होता।

यदि कोई बच्चा एक कक्षा उत्तीर्ण करके दूसरी कक्षा में पहुँच गया तो इसका अर्थ यह नहीं है कि वह एक मंज़िल ऊपर बैठेगा। इसका अर्थ है वह श्रेष्ठता की ओर गया।

इसका एक और उदाहरण मनुष्य का शरीर है। हमारा यदि किसी दुर्घटना में हाथ कट जाये ,पैर कट जाये या अन्य किसी अंग को क्षति पहुँच जाये तो हम बच सकते हैं क्योंकि ये सब हमारी जड़ें नहीं हैं, हमारी शाखायें हैं लेकिन हमारे मस्तक पर कोई आघात हो जाए या हमारा शिर विच्छेद हो जाये तो हमारे बचने की कोई सम्भावना नहीं है। भगवान कहते हैं कि ब्रह्माण्ड भी ऐसा ही है।

भगवान ने संसार वृक्ष को अश्वत्थ कहा। अश्वत्थ में अ+श्व का अर्थ है जो कल तक न रहे। जो हर क्षण बदल रहा है। वेदान्त में संसार की परिभाषा है-

"संसृति इति संसार"

जो हर क्षण सरक रहा है वह संसार है। एक पल पहले संसार जैसा था, वैसा अब नहीं है। हर क्षण यह दृश्य बदल रहा है। हर क्षण यह संसार बदल रहा है।

अश्वत्थ (पीपल के वृक्ष) से भगवान ने संसार की तुलना इसलिए की है क्योंकि पीपल का वृक्ष सबसे चञ्चल होता है। हवा एकदम स्थिर हो तो भी आपको पीपल का पत्ता हिलता हुआ दिखाई देगा। भगवान कहते हैं कि पूरा ब्रह्माण्ड भी स्थिर नहीं है, यह टिकता नहीं है, यह बदलता रहता है।

श्रीभगवान कहते हैं कि यह बदल तो रहा है पर नष्ट नहीं होता, केवल इसके स्वरूप में परिवर्तन होता रहता है। पृथ्वी की आबादी बढ़ने या घटने से पृथ्वी का वजन बढ़ता या घटता नहीं है बल्कि यह पहले जैसे ही रहता है। कल को परमाणु विस्फोट हो और एक अरब लोग मर जाएँ तो पृथ्वी का भार कम हो जायेगा, ऐसा नहीं है,यह नहीं बदलेगा। शरीर को जलाने से शरीर नष्ट नहीं होता। इसमें पृथ्वी का जो अंश है वह पृथ्वी में मिल जाता है, वायु का वायु में, अग्नि का अग्नि में, जल का जल में और आकाश का आकाश में मिल जाता है।

जैसे कोई हमसे कहे की इस कागज को नष्ट करके दिखाओ तुमको एक लाख रुपया मिलेगा परन्तु हम कागज को नष्ट नहीं कर सकते। किसी कागज को फाड़ने पर कतरन बचेगी, पानी में भिगोने पर लुगदी बन जाएगा या जलाने पर कॉर्बन में बदल जायेगा, पर फिर भी वह नष्ट नहीं होता, बल्कि वह विभिन्न रूपों में परिवर्तित हो जाता है, वैसे ही पूरा ब्रह्माण्ड अव्ययी है, नष्ट नहीं होता, केवल इसके स्वरूप में परिवर्तन होता रहता है।

यह ना कभी शुरू हुआ है और ना ही कभी समाप्त होगा। यह सनातन है। नित्य रहने वाला है। भगवान आगे कहते हैं कि छन्द यानि वेद, यानि ज्ञान इसके पत्ते हैं। जैसे किसी वृक्ष के पत्ते अनन्त होते हैं और सारे वृक्षों में मिलाकर तो अनन्त पत्तियाँ होंगी। वैसे ही ज्ञान भी अनन्त है। भगवान कहते हैं कि जो इस वृक्ष को तत्व से जानता है, वह ज्ञानी है परन्तु बहुत सा ज्ञान प्राप्त कर के भी आप यह नहीं कह सकते कि मुझे पूरा ज्ञान हो गया है।

यदि हम गीता जी के बारे अलग-अलग व्यक्तियों से पूछेंगे कि आप गीता जी के बारे में कितना जानतें हैं? कोई बोलेगा कि गीता जी पर हाथ रखकर कसम खिलाई जाती है। कोई बोलेगा मुझे गीता के श्लोक आते हैं। कोई बोलेगा मुझे गीता जी का अर्थ भी पता है और कोई पूज्य स्वामीजी जैसा महापुरुष होगा जो वह बोलेगा कि मैं गीता को जीता भी हूँ अर्थात मैंने उसे अपने जीवन में उतारा भी है। जानते सभी हैं पर वास्तव में जानता वही है जो गीता जी को जी रहा है, जिसने उसे अपने जीवन में उतार लिया है।

15.2

अधश्चोर्ध्वं(म्) प्रसृतास्तस्य शाखा गुणप्रवृद्धा विषयप्रवालाः।
अधश्च मूलान्यनुसन्ततानि कर्मानुबन्धीनि मनुष्यलोके।।2।।

उस संसार वृक्ष की गुणों (सत्त्व, रज और तम) के द्वारा बढ़ी हुई (तथा) विषय रूप कोंपलों वाली शाखाएँ नीचे, (मध्य में) और ऊपर (सब जगह) फैली हुई हैं। मनुष्यलोक में कर्मों के अनुसार बाँधने वाले मूल (भी) नीचे और (ऊपर) (सभी लोकों में) व्याप्त हो रहे हैं।

विवेचन :

भगवान कहते हैं कि हे अर्जुन! इस अश्वत्थ वृक्ष के ऊर्ध्व मूल अर्थात मूल में मैं हूँ। अब उसको कोई साकार माने, निराकार माने, ब्रह्म माने, ॐ माने, राम माने, दुर्गाजी माने, ईष्ट माने, परब्रह्म परमात्मा माने या और कुछ। ब्रह्मा जी इस वृक्ष का मुख्य तना हैं। इसमें तीन मुख्य योनियाँ हैं, देव, मनुष्य और त्रियक। जो सत्कर्म करते हैं, उनको देव योनि प्राप्त होती है और वे देव लोक में निवास करते हैं। इस ब्रह्माण्ड में चौदह लोक बताए गए हैं।

1. सत्लोक
2. तपोलोक
3. जनलोक
4. महलोक
5. ध्रुवलोक
6. सिद्धलोक
7. पृथ्वीलोक
8. अतललोक
9. वितललोक

10. सुतललोक
11. तलातललोक
12. महातललोक
13. रसातललोक
14. पाताललोक

इन चौदह लोकों में मनुष्य लोक सातवें स्थान पर है। मनुष्य लोक से ऊपर के छह लोक देवलोक हैं। उत्तम कर्म करने वाली देव आत्माएँ इन देव लोकों में निवास करती हैं। जिन्होंने न ही बहुत अच्छे और न ही बहुत ही बुरे कर्म किए होते हैं, वे वापस मनुष्य लोक में आ जाते हैं अर्थात मनुष्य योनि को प्राप्त होते हैं। जो पाप कर्म, हिंसा आदि दुष्कर्म करते हैं, उनको त्रियक योनि अर्थात पशु, पक्षी, कीटक आदि योनियों में जाना होता है। ये शाखाएँ सर्वत्र फैली हुई हैं।

मनुष्य बार बार इन योनियों में इसलिए जाता है क्योंकि अहन्ता, ममता और वासना तीन जड़ें उसे पकड़ती हैं। अर्थात मैं, मेरा और जो मेरे पास है वह जाने न पाए। इन तीन कारणों से मनुष्य इन चौदह लोकों में- थलचर, नभचर, जलचर, अण्डज, स्वेदज और उद्भिज इत्यादि अलग-अलग पञ्चभूतों के शरीरों में घूमता रहता है।

इस ब्रह्माण्ड की रचना तीन गुणों। सत गुण, रज गुण और तम गुण को मिलाकर हुई है। प्रश्न उठता है कि इन तीनों गुणों से ही पूरे ब्रह्माण्ड की रचना कैसे हो गई।

यह वैसे ही है जैसे हमारे मोबाइल में मोबाइल स्क्रीन पर सोलह बिलियन से भी ज्यादा रङ्ग देखे जा सकते हैं लेकिन इसमें जो रङ्गों के मूल तत्व हैं वह हैं **RGB यानि Red, Green and Blue, लाल, हरा, नीला** इन तीन रङ्गो के वैरिएशन (परिवर्तन) से ही ये सारे रङ्ग मोबाइल स्क्रीन पर उभरते हैं।

आपने कलर प्रिन्टर देखा होगा, उसमें बहुत सारे रङ्गो की स्याही नहीं भरनी पड़ती, केवल चार ही रङ्गों की भरनी पड़ती है - **Cyan (नीला), Magenta (गुलाबी), Yellow (पीला) और Black (काला).** इन चार रङ्गों से मिलाकर एक करोड़ साठ लाख रङ्ग उत्पन्न हो जाते हैं।

जब मनुष्य के बनाए तीन या चार रङ्गो से इतने रङ्ग प्रिन्ट हो सकते हैं तो ऐसे ही भगवान इन तीन तत्वों से सारी योनियों की, जड़, चेतन, पदार्थ और सारे ब्रह्माण्ड की रचना करते हैं।

केवल ये चौरासी लाख योनियाँ निर्मित नहीं होती बल्कि यही नहीं कोई दो मनुष्य एक जैसे नहीं होते, किसी एक पेड़ की दो पत्तियाँ भी एक जैसी नहीं होती, संसार के किन्ही भी दो लोगों का फिंगरप्रिंट (उंगलियों के निशान) एक जैसे नहीं होते ,उनकी आँख की पुतली (रेटीना) एक जैसी नहीं होती, यहाँ तक कि जो वर्तमान में हैं और जो चले गए हैं उनका भी यह सब कुछ एक जैसा नहीं होता। यहाँ तक कि दो भाई बहनों का डी.न.ए एक होने पर भी उनका रङ्ग-रूप, स्वभाव और रुचि भी एक जैसी नहीं होती। भगवान की बनाई हुई यह प्रकृति अद्‌भुत है और अनन्त काल से व्याप्त है। प्रकाश, देवता, भूत प्रेत सब इन्हीं तत्वों को मिलकर बनते हैं। तीन तत्वों को मिलकर पाँच मूल तत्व बनते हैं-अग्नि, वायु, जल, आकाश और पृथ्वी और पाँच गुणों का विकास होता है। शब्द, स्पर्श, रूप, रङ्ग और गन्ध। ये प्रवाल विषय कहलाते हैं। भगवान कहते हैं कि यह सारा ब्रह्माण्ड इस प्रकार से व्याप्त होता है।

इन चौदह लोकों में मनुष्य सतोगुण, रजोगुण और तमोगुण के कारण ही अपनी अहन्ता, ममता और वासना की प्रवृत्ति के कारण ही फँसता है।

15.3

न रूपमस्येह तथोपलभ्यते, नान्तो न चादिर्न च सम्प्रतिष्ठा ।
अश्वत्थमेनं(म्) सुविरूढमूलम्, असङ्गशस्त्रेण दृढेन छित्त्वा।।3।।

इस संसार वृक्ष का (जैसा) रूप (देखने में आता है), वैसा यहाँ (विचार करने पर) मिलता नहीं; (क्योंकि इसका) न तो आदि है, न अन्त है और न स्थिति ही है। इसलिये इस दृढ़ मूलों वाले संसार रूप अश्वत्थ वृक्ष को दृढ़ असङ्गता रूप शस्त्र के द्वारा काटकर –

विवेचन : भगवान कहते हैं कि हे अर्जुन! यह संसार रूपी वृक्ष जैसे मैंने बताया वैसा है नहीं। मैंने तुम्हें केवल एक उदाहरण मात्र दिया है। इस वृक्ष के तो तुम आदि और अन्तिम छोर दोनों देख सकते हो पर मेरे ब्रह्माण्ड का न कोई आदि है और न कोई अन्त है। यह अनन्त है।

हम अपनी बुद्धि से अनन्त आकाश गङ्गा से यही तात्पर्य निकाल सकते हैं कि एक हजार आकाश गङ्गा, एक करोड़ आकाश गङ्गा पर उसके बाद कितनी और, इसकी कल्पना या अनुमान हम नहीं लगा सकते।
भगवान कहते हैं कि क्योंकि तुम अपनी जड़ बुद्धि से सोचते हो, इसलिए तुम्हारा ज्ञान अधूरा है। यह ना पहली बार कभी हुआ, ना ही अन्तिम बार कभी हुआ है। भगवान कहते हैं कि यहाँ तो तुम्हें एक वृक्ष खड़ा दिखाई दे रहा है पर मेरे ब्रह्माण्ड में कुछ भी स्थिर नहीं है। यह हर समय बदल रहा है। हर क्षण कुछ नया पैदा हो रहा है और हर क्षण कुछ विलुप्त हो रहा है।

हमें अपने बचपन की फोटो दिखाई जाए जिसे हमने पहले देखा न हो तो हम पहचानेंगे नहीं कि वह हम ही हैं क्योंकि हमारा शरीर पहले जैसा तो रहा नहीं, यह हर क्षण बदल रहा है। आधुनिक विज्ञान कहता है कि साढ़े तीन साल पुरानी कोई भी कोशिका हमारे शरीर में नहीं रहती क्योंकि हमारे शरीर में हर क्षण नई कोशिकाएँ बन रही हैं और पुरानी नष्ट हो रही हैं।

भगवान कहते हैं कि हे अर्जुन ये अहन्ता, ममता और वासना इन्हीं में मनुष्य फँसा रहता है। अहन्ता यानि "मैं" की भावना होना, मैं बलवान, मैं बड़ा, मैं सुन्दर शरीर,आदि आदि, ममता यानि "मेरा" की भावना, मेरी पत्नी, मेरा पुत्र, मेरा सम्प्रदाय आदि आदि और वासना यानि किसी वस्तु को पाने की लालसा, जैसे सुबह की चाय या खाने के बाद मीठा खाए बिना मैं रह ही नहीं सकता, लाइट खुली है तो मुझे नींद नहीं आती, आदि आदि।

आदि शंकराचार्य भगवान कहते हैं कि यदि ये वासनाएँ कट गई तो मनुष्य को **पुनरपि जननं पुनरपि मरणं पुनरपि जननी जठरे शयनम्** अर्थात बार-बार जन्म लेना, बार-बार मरना और बार-बार माँ के गर्भ में उलटे लटके रहने से छुटकारा मिल सकता है। ये वासनाएँ तुम असङ्गता रूपी शस्त्र से काट सकते हो अर्थात इन वासनाओं से निर्लिप्त होकर तुम्हें इस जीवन मृत्यु के चक्र से छुटकारा मिल जाएगा।

शुकदेव महाराज का एक प्रसङ्ग है। उन्होंने राजा परीक्षित को भागवत की कथा सुनाई थी। शुकदेव महाराज जी महर्षि वेदव्यास जी के पुत्र थे। वे बाल्यकाल से ही परम वैरागी थे। एक बार उन्होंने अपने पिता से एक प्रश्न किया। वेदव्यास जी ने शुकदेव से कहा तुम ने बहत ज्ञान प्राप्त किया है पर तुम्हें बहुत कुछ सीखना बाकी है और मेरे पास तुम्हारी शिक्षा पूरी नहीं हो सकती।

शुकदेव महाराज ने कहा आप गुरुओं के भी गुरु और परम ज्ञानी हैं। ऐसा कौन सा ज्ञान है जो आप मुझे नहीं दे सकते।
महर्षि वेद व्यास ने कहा कि ऐसी बात नहीं है पर जैसा मैं कहता हूँ, तुम वैसा करो। तुम्हें ज्ञान प्राप्ति के लिए मिथिला के राजा जनक के पास जाना होगा और उनसे ज्ञान प्राप्त करना होगा। शुकदेव जी को बहुत बुरा लगा।

उन्हें लगा कि पिता किसी ऋषि मुनि के पास भेजते तो ठीक था पर एक गृहस्थ, एक संसारी राजा के पास मुझ जैसे वैरागी को ज्ञान प्राप्ति के लिए भेजना बहुत ही अपमान की बात है। उन्हें अपनी साधना पर अति अहम् था किन्तु पिता की आज्ञा का उलंघन नहीं कर सकते थे और चुपचाप मिथिला की ओर चल पड़े।

मिथिला नगर पहुँचकर उन्होंने द्वारपाल से कहा "जाओ अपने महाराज राजा जनक को सूचना दो, वेद व्यास जिन्होंने अठारह पुराण और चार वेदों की रचना की है, संसार के सभी गुरु जिन्हें व्यास का दर्जा देते हैं, ऐसे उत्तम वेद व्यास महाराज के अत्यन्त

विलक्षण, अत्यन्त योगी, वैराग्यवान पुत्र शुकदेव उनसे मिलने पधारे हैं। द्वारपाल ने शुकदेव जी प्रणाम करके तुरन्त उनके द्वारा दिया गया लम्बा चौड़ा परिचय राजा जनक को बताया। परम्परा यह थी कि जब भी इस प्रकार के महापुरुष राजा जनक के महल में पधारते थे तो राजा जनक उन्हें लेने स्वयं द्वार तक जाते थे। लेकिन आज कुछ अलग घट गया।

ये राजा जनक सीता जी के पिता नहीं हैं। भागवत जी में तिहत्तर जनक की सूची है। इसमें उन्चासवें जनक जिनका नाम क्षीरध्वज है, वे सीता जी के पिता हैं। ये राजा जनक उनसे कई पीढ़ी पहले के राजा हैं। राजा जनक ने द्वारपाल से कहा कि वे शुकदेव जी से कहें कि वे खड़े रहकर प्रतीक्षा करें। शुकदेव जी को इस प्रकार का उत्तर पाकर बहुत आश्चर्य हुआ और मन को बड़ी ठेस लगी किन्तु वे प्रतीक्षा करने लगे।

पूरा दिन व्यतीत हो जाने पर जब उन्हें राजा जनक ने नहीं बुलाया तो रात में उन्होंने पुन: दूसरे द्वारपाल को उसी लम्बे चौड़े परिचय के साथ राजा जनक के पास संदेश देकर भेजा। इस बार भी शुकदेव जी को प्रतीक्षा करने के लिए कहा गया। इस प्रकार शुकदेव जी सात दिन तक एक ही आसन में बिना कुछ खाये पिये खड़े रहकर प्रतीक्षा करते रहे। वे प्रतिदिन संदेश भेजते थे और हर दिन उन्हें प्रतीक्षा करने के लिए कहा जाता पर इसके साथ एक बात घटित हो रही थी कि हर गुजरते दिन के साथ उनके परिचय के विशेषण कम होते जा रहे थे।

पहले दिन अपने परिचय में उन्होंने करीब पच्चीस विशेषण का प्रयोग किया था। सातवें दिन उन्होंने द्वारपाल से कहा कि तुम अपने राजन से कहना कि हिमालय पर्वत से उनसे ज्ञान प्राप्त करने और शिष्यत्व भाव से शुकदेव उनसे मिलने आया है।

राजा जनक ने तुरन्त शुकदेव जी को बुलाने के लिए कहा और राजमहल में पहुँचने पर उनका बहुत स्वागत और आदर सत्कार किया। भोजन जलपान कराने के बाद उन्हें कुछ देर विश्राम करने के लिए कहा। थोड़ी देर में राजा जनक उठकर आए और शुकदेव जी से कहा कि आपका आगमन बहुत अच्छे दिन हुआ है। यह हमारे लिये सौभाग्य की बात है।

उन्होंने कहा, आज मिथिला का राज्य दिवस है और आज हमारे यहाँ कुल देवी की उपासना की जाती है। इसमें ब्रह्मचारी की बड़ी भूमिका होती है और भगवान ने संभवतः आपको उसी प्रयोजन से यहाँ भेजा है।
आज के दिन एक ब्रह्मचारी को देवी पूजन के तेल के पात्र को लेकर पूरे नगर की प्रदक्षिणा करनी होती है। इससे पूरे मिथिला नगर को देवी का आशीर्वाद प्राप्त होता है। आज आप इस तेल के पात्र को लेकर पूरे नगर में जाएँ, किन्तु ध्यान रहें प्रदक्षिणा करते समय तेल कि एक भी बूँद भूमि पर गिरना नहीं चाहिए, यह आपसे हमारी प्रार्थना है। उस तेल से ही देवी पूजन होगा।

यह कहकर राजा जनक ने दस किलो वजन का बड़ा भारी पतीला तेल से भर कर उन्हें दिया, जिसे लेकर वे नगर के लिये चल दिये। उनके साथ अङ्गरक्षकों की एक टोली भी साथ चली। पूरे नगर और राजमार्ग को सजाया गया था। जगह-जगह फव्वारे और पुष्प वर्षा का प्रबन्ध था। पूरे नगर का भ्रमण करके थके हारे वापस लौट आये तो राजा ने उनसे पूछा कि आपने सुसज्जित नगरी का दिग्दर्शन किया। आप को कैसा लगा। मार्ग में जो साज सज्जा हो रही थी, आपके साथ जो सेना चल रही थी या जो गीत सङ्गीत बज रहा था वह सब आपको कैसा लगा।

शुकदेवजी ने कहा कि महाराज मैं तो तेल की सुरक्षा में ही लगा था, मेरा ध्यान कहीं और नहीं था, मेरा पूरा ध्यान इस तेल की सुरक्षा में लगा हुआ था कि कहीं तेल बाहर न छलक जाए इसलिए मैंने कुछ नहीं देखा।

राजा जनक ने शुकदेव से कहा कि आप धन्य हैं, आपकी पहली शिक्षा अब पूर्ण हो गई। इस जगत में आपको रहना है, इससे व्यवहार करना है तो सब तरफ से ध्यान हटाकर, अपना ध्यान एकमात्र परमात्मा में लगाना चाहिए। जब आपका ध्यान परमात्मा में लगा होगा तो आप किसी अहन्ता, ममता और वासना के जाल में फँसेंगे नहीं।

जो जग में रहो तो ऐसे रहो,
जैसे जल में कमल का फूल रहे।

कमल का फूल जल में उत्पन्न होता है पर आश्चर्य की बात यह है कि वह जिस जल में उत्पन्न होता है, उसको कभी स्पर्श नहीं

करता। कमल के फूल पर ऊपर से पानी भी डाल दें तो भी पानी उस पर टिकता नहीं। अगर संसार की अहन्ता, ममता, वासना की जड़ें काटनी ही हैं तो परिवार का, नौकरी का, व्यापार का सारा काम करना होगा, पड़ोसी धर्म भी निभाना होगा अर्थात सारे नियमित काम करने होंगे पर ध्यान केवल परमात्मा पर ही लगाकर रखना होगा। यदि यह किया तो असङ्ग रूपी शस्त्र से ये सारी मोह की जड़ें कट जाएँगी।

15.4

ततः(फ्) पदं(न्) तत्परिमार्गितव्यं(यँ) यस्मिन्गता न निवर्तन्ति भूयः।
तमेव चाद्यं(म्) पुरुषं(म्) प्रपद्ये यतः(फ्) प्रवृत्तिः(फ्) प्रसृता पुराणी॥15.4॥

उसके बाद उस परमपद (परमात्मा) की खोज करनी चाहिये जिसको प्राप्त होने पर मनुष्य फिर लौटकर संसार में नहीं आते और जिससे अनादिकाल से चली आने वाली (यह) सृष्टि विस्तार को प्राप्त हुई है, उस आदिपुरुष परमात्मा के ही मैं शरण हूँ।

विवेचन : जो असङ्ग रूपी शस्त्र से इन जड़ों को काटता है वह परमात्मा की खोज में लग जाता है जिसे प्राप्त करके मनुष्य इस संसार में लौटकर नहीं आते और वे उस आदिपुरुष परमात्मा की शरण में आ जाते हैं। ऐसा जिस जीवात्मा का जब भाव बन जाता है तो वह जीवात्मा कैसी होती है, भगवान बताते हैं-

15.5

निर्मानमोहा जितसङ्गदोषा, अध्यात्मनित्या विनिवृत्तकामाः।
द्वन्द्वैर्विमुक्ताः(स्) सुखदुःखसञ्ज्ञैः(र्), गच्छन्त्यमूढाः(फ्) पदमव्ययं(न्) तत्।।5।।

जो मान और मोह से रहित हो गये हैं, जिन्होंने आसक्ति से होने वाले दोषों को जीत लिया है, जो नित्य-निरन्तर परमात्मा में ही लगे हुए हैं, जो (अपनी दृष्टि से) सम्पूर्ण कामनाओं से रहित हो गये हैं, जो सुख-दुःख नाम वाले द्वन्द्वों से मुक्त हो गये हैं, (ऐसे) (ऊँची स्थिति वाले) मोह रहित साधक भक्त उस अविनाशी परमपद (परमात्मा) को प्राप्त होते हैं।

विवेचन : ऐसी जीवात्मा की मैं, मेरा और सांसारिक विषयों से आसक्ति छूट जाती है। वह नित्य प्रति अध्यात्म में लग जाती है और उसकी सारी इच्छाओं की निवृत्ति हो जाती है। वह सर्दी-गर्मी, सुख-दुख इन सारे द्वन्दों से मुक्त होकर मोह रहित उस अविनाशी परमपद परमात्मा को प्राप्त हो जाती है।

एक सुन्दर भजन और हरि सङ्कीर्तन के साथ आज के विवेचन सत्र का समापन हुआ।

मैं नहीं, मेरा नहीं, यह तन किसी का है दिया ।
जो भी अपने पास है, वह धन किसी का है दिया ॥

देने वाले ने दिया, वह भी दिया किस शान से ।
मेरा है यह लेने वाला, कह उठा अभिमान से मैं,
मेरा यह कहने वाला, मन किसी का है दिया ।
मैं नहीं, मेरा नहीं, यह तन किसी का है दिया ।
जो भी अपने पास है, वह धन किसी का है दिया ॥

जो मिला है वह हमेशा, पास रह सकता नहीं ।
कब बिछुड़ जाये यह कोई, राज कह सकता नहीं ।
जिन्दगानी का खिला, मधुवन किसी का है दिया ।
मैं नहीं, मेरा नहीं, यह तन किसी का है दिया ।
जो भी अपने पास है, वह धन किसी का है दिया ॥

जग की सेवा खोज अपनी, प्रीति उनसे कीजिये ।
जिन्दगी का राज है, यह जानकर जी लीजिये ।
साधना की राह पर, यह साधन किसी का है दिया ।
मैं नहीं, मेरा नहीं, यह तन किसी का है दिया ।
जो भी अपने पास है, वह धन किसी का है दिया ॥

इसके बाद प्रश्नोत्तर सत्र प्रारम्भ हुआ।

प्रश्नकर्ता - सुमित जी
प्रश्न - हम सुनते हैं कि जीवन एक रङ्गमञ्च है और हम सब कठपुतली हैं, हम सबको रोल मिला हुआ है और हम अपना रोल पूरा करने के लिए आते हैं तो गीता जी के आलोक में यह कथन कितना सही है?
उत्तर - बिल्कुल सही है। अब यह बताइए की कठपुतली होने के बाद भी सभी का एक सा प्रभाव रहता है या अलग-अलग, हर एक का अलग-अलग कार्य है और यहाँ भी कर्म का सिद्धान्त ही है। हमारे प्रारब्ध से जो बातें होती है वह हमें अवसर रूप में कर्म करने के लिए मिलती हैं।अब उस अवसर को उपयोग करना या उसे जाने देना यह हमारे कर्म का भाग है। सारा जीवन कर्म और प्रारब्ध से जुड़ा हुआ है हमें कर्म करने के लिए अवसर मिलते हैं लेकिन उस अवसर को हम सात्विक, तामसिक या राजसिक कैसे उपयोग करते हैं, इसका निर्धारण हमारे कर्म से होता है। यह इस जन्म और हजारों पूर्व जन्मों के कर्म से ही प्रारब्ध बनता है। यह हमें कहीं से उपहार नहीं मिलता, यह हमारे कर्मों का ही मिश्रित फल है।

अब जैसे आपको अवसर मिल रहा है प्रश्न पूछने का तो अवसर आपको मिल रहा है यह भाग्य की बात है, परन्तु पूछना, ना पूछना या क्या पूछना है यह सब आपके अपने हाथ में है, उसका कैसा उपयोग करना है, यह कर्म स्वातंत्र्य भगवान ने हमारे हाथ में दिया है।

प्रश्नकर्ता - सुमित भैया
प्रश्न - ऊर्ध्वमूलमधः वृक्ष को फिर से समझा दीजिए?
उत्तर - ऊर्ध्वमूल अर्थात जिसकी शाखाएँ ऊपर की ओर हैं। मनुष्य और प्रभु के उदाहरण से इसे समझा जा सकता है। ये परमात्मा की जड़ है जिसका विस्तार ऊपर की ओर है।

प्रश्नकर्ता - गोपाल भैया
प्रश्न - गीताजी व्याकरण सहित और अर्थ सहित हमें कब तक उपलब्ध हो जाएगी?
उत्तर - व्याकरण सहित गीता 5 जनवरी को मिलनी शुरू हो जाएगी और स्टोर में 20 जनवरी तक पहुँच जाएगी ।अर्थ वाली गीता को बनने में अभी समय है करीब एक वर्ष बाद उपलब्ध होगी। वह विलक्षण होगी परन्तु अभी उसे पूरा होने में समय है ।

प्रश्नकर्ता - रजत जी
प्रश्न - आपने बोला था कि दुनिया में कुछ भी destroy (समाप्त) नहीं हो सकता? यह मुझे समझ नहीं आया?
उत्तर - संसार में कोई भी वस्तु नष्ट नहीं होती। वह एक तत्व से दूसरे में बदल जाती है । जैसे मेरे हाथ में यह कागज है यदि इसे जला देंगे, तो यह धुँआ बन जाएगा और इसे भिगा देंगे तो यह लुगदी जैसा बन जाएगा परन्तु यह नष्ट नहीं होगा।

प्रश्न - आपने जो छोटी वाली गीता पुस्तक बताई थी, वह कहाँ मिलती है?
उत्तर - learngeeta.com स्टोर पर ₹20 में उपलब्ध है।

प्रश्नकर्ता - अनिल भैया
प्रश्न - बहुत से सन्तों ने यह बताया है कि आचरण करना है तो श्री राम जैसा करो, कृष्ण जी जैसा करने को नहीं कहा गया है?
उत्तर - नहीं, ऐसा नहीं है। कृष्ण जैसा आचरण नहीं करना, ऐसा कहीं नहीं कहा गया है। परन्तु राम जी का आचरण मर्यादा के

रूप में सबसे उत्तम है। वह मर्यादा पुरुषोत्तम हैं। इसलिए राम के स्वरूप में उन्होंने मर्यादा की स्थापना की। वह आचरण हम सबके लिए सर्वोच्च माना गया है। यह बात आती है। लेकिन कृष्ण का जीवन भी उतना ही अनुकरणीय है जितना कि श्री राम का। गीता में भगवान जी ने जिस प्रकार जीवन बिताने के बारे में बताया, श्री राम जी के जीवन में हम वैसा का वैसा ही देखते हैं। दोनों का जीवन ही अनुकरणीय है।

प्रश्न - आपने ऐसे बताया कि एक ही परमात्मा को भजो परन्तु हमारे यहाँ तो तैंतीस करोड़ देवी देवता हैं तो फिर इष्ट देव कौन हैं आप मेरा संशय दूर करें।
उत्तर - मेरा कहने का तात्पर्य यह है कि इष्ट एक होना चाहिए। एक के साधे सब सधे ,भजना सबको चाहिए परन्तु इष्ट देव एक को ही मानना चाहिए। हमारे यहाँ आदि शङ्कराचार्य जी ने गृहस्थ के लिए पञ्चदेव की पूजा का विधान किया है।

एक विष्णु के किसी स्वरूप की प्रार्थना-चाहे राम जी की या कृष्ण की या किसी भी एक स्वरूप की उपासना।
दूसरा गणेश जी की उपासना ।
एक देवी के स्वरूप की उपासना
एक शिवजी की उपासना और
एक सूर्य की उपासना।

पाँच उपासना बताई गई हैं एक इष्ट होना चाहिए और जो इष्ट है उसे मध्य में रखें। बाकी चार को उनके दाएँ बाएँ रख सकते हैं। मेरे इष्ट परम आराध्य हैं,जब मैं अत्यंत सुखी हूँ या अत्यन्त दुखी हूँ तो मैं किन से बात करने जाऊँगा। जब मैं पने मनोभाव में बहुत गहरा उतरा हुआ होऊँगा तो मैं जिससे बात करूँगा, वही मेरे इष्ट देव हैं। बाकी सब भी हैं देव ही। उदाहरण के लिए यदि राम मेरे इष्ट देव हैं और मैं शिव जी के मन्दिर में जाता हूँ तो मैं यही कहूँगा कि शिवजी मेरी राम जी से भक्ति बढ़े। मैं श्रीकृष्ण जी के मन्दिर में जाता हूँ तो कहता हून भगवान मेरी रामजी से भक्ति बढ़े। मैं दुर्गा जी के मन्दिर में जाता हूँ तो वहाँ भी कहता हूँ कि हे माँ मेरी राम जी से भक्ति बढ़े। मैं देवी का उपासक हूँ तो जिस भी मन्दिर में जाऊँगा, वहाँ देवी से भी श्री राम से ही अपने भक्ति बढ़ाने की प्रार्थना करूँगा। सब देवताओं की उपासना करें और अपने इष्ट की भक्ति करें यही सर्वोत्तम है।

प्रश्नकर्ता - गीता जी
प्रश्न -अपने ईष्ट का कैसे पता चलेगा कि अपने ईष्ट कौन है?
उत्तर - जैसा कि मैं ने पहले भी बताया, जब आप अत्यधिक सुख में हों या अत्यधिक दुःख में हों तब जो भी भगवान आपके चिन्तन में सबसे पहले आते हैं वही आपके इष्टदेव हैं और जिस से आपका संवाद करने का मन करे वही आपके इष्ट हैं। किसी जन्म कुण्डली आदि से इसका कोई लेना-देना नहीं है।

प्रश्नकर्ता - श्वेता जी
प्रश्न -आपने बताया कि ईश्वर प्राप्ति के लिए अहङ्कार, वासना और मोह की समाप्ति होनी चाहिए तो अहङ्कार और वासना को तो नियन्त्रित किया जा सकता है परन्तु संसार में मोह तो स्वाभाविक है उसे कैसे समाप्त करें?
उत्तर - स्वाभाविक तब तक है जब तक मैं अपने को शरीर मानूं। जब मैं अपने को शरीर मानता हूँ तो यह प्रश्न खड़ा होगा। तो शरीर से शुरू हुए सारे मोह भी मेरे ही होंगे। परन्तु जब मैं अपने को शरीर मानना छोड़ दूँगा। मैं मेरा शरीर नहीं हूँ जब यह भाव मन में आ जाएगा तब शरीर से जुड़े हुए सारे मोह नश्वर लगने लगेंगे। सारे मोह और कर्तव्य हमारे शरीर से हैं यदि मैं माता के रूप में हूँ तो मुझे माता के कर्तव्य करने होंगे और यदि मैं पुत्री के रूप में हूँ तो मुझे पुत्री के कर्तव्य करने हैं। परन्तु जब यह भाव मन में आ जाए कि चाहें मैं स्त्री हूंँ, पुरुष हूँ सैनिक हूँ, खिलाड़ी हूँ, यह सब मेरे शरीर के साथ है। परन्तु ना मैं खिलाड़ी हूँ, ना स्त्री हूँ, ना माता हूँ, ना बेटी हूँ, जिस दिन यह भाव दिमाग में आ जाएगा तब शरीर से जुड़े हुए सारे मोह भी समाप्त हो जायेंगे और सब कुछ सम्बन्ध नश्वर लगने लगेंगे।

प्रश्न - डिटैचमेंट कैसे करें?
उत्तर -अपने मन को मोह माया से हटाओ। इमरती खाने में कोई दिक्कत नहीं है, परन्तु इमरती खाने के बाद जब उसकी याद आती है कि वह कितनी स्वादिष्ट थी पन्द्रह साल बाद भी यदि कोई शादी में इमरती खाते हैं और आप सोचती हैं कि मैं वहाँ गई थी ना, वहाँ मैंने जो इमरती खाई उसका स्वाद बहुत अच्छा था। यह जो आपका मन ही इमरती के साथ राज जुड़ गया, यह

गलत है यह नहीं होना चाहिए।

प्रश्न - क्या मुझे अपने बच्चों के सुख-दुख से सुख-दुख नहीं होना चाहिए?
उत्तर - नहीं, ऐसा नहीं है। आजकल रूस और यूक्रेन का युद्ध हो रहा है तो आपको क्या दुःख होता है। नहीं होता है, परन्तु होना चाहिए। उतनी करुणा हम सबके मन में होनी चाहिए। हमने अपने मन में मैं, मेरे का भाव रखा हुआ है। मान लीजिए अभी किसी हवाई जहाज का एक्सीडेंट हो गया, तो मुझे क्षणिक दुःख होगा कि वह बहुत बुरा हुआ। परन्तु यदि उसमें मेरे परिवार का कोई होगा, तो भावना बदल जाती है।अर्थात मेरेपन की भावना रहती है। उस घटना से दुःख नहीं होता, घटना से जुड़े हुए मेरेपन की भावना से दुःख होता है, तो यह मेरेपन की भावना को ही हटाना है। इस शरीर को जितना मैं मानेंगे, उतना ही कष्ट होगा और शरीर को मैं नहीं मानेंगे तो कोई कष्ट नहीं है। जब मैं पाँच वर्ष का था, फिर बीस का हुआ, फिर चालीस का फिर अस्सी का। तो यह शरीर तो हर क्षण बदल रहा है। मेरेपन की भावना तो वही है। यह शरीर बदलता गया परन्तु मैं तो वही हूँ। इसका मतलब मैं हमेशा से एक ही हूँ किन्तु यह शरीर बदल रहा है, यह शरीर हर क्षण बदल रहा है, यह मर भी जाएगा परन्तु मैं सदा रहूँगा।

प्रश्न - मैं एक डॉक्टर हूँ, मेरा कार्य दूसरे के दुख से जुड़ा हुआ है कई बार हम देखते हैं कि कोई गरीब है है परन्तु उसके दुख में भी हम उससे पैसे लेते हैं तो क्या हमें इसका पाप लगता होगा?
उत्तर - सब बातों में अपने कर्तव्य बुद्धि को ऊपर रखें। जितनी उदारता हम अपने प्रोफेशन में किसी के प्रति कर सकते हैं, उतनी हमें करनी चाहिए। सबके प्रति करुणा का भाव रखना चाहिए। हम और यदि कुछ नहीं कर सकते तो उसके लिए प्रार्थना तो कर ही सकते हैं। इतना करने मात्र से ही मेरा दायित्व पूरा हो जाता है।

प्रश्न - श्रीकृष्ण को तो अब मैं बहुत जान रही हूँ, परन्तु कष्ट में मेरे मुँह से राम का नाम निकलता है तो क्या राम मेरे ईष्ट हैं?
उत्तर - जो स्वरूप हमारे मन में सबसे पहले आता है वही हमारे ईष्ट होते हैं। राम बोलने का तो हमें बचपन से अभ्यास होता है। राम, कृष्ण, शिव सब एक ही हैं हम उन्हें उन के किस स्वरूप में याद करते हैं, यह उस पर निर्भर करता है मान लीजिए आप डॉक्टर हैं तो मैं आपको श्वेता कहूँ या डॉक्टर कहूँ या काले चश्मे वाली बहन जी कहूँ। आप तो वही हैं इससे आपके स्वरुप में कोई फर्क नहीं पड़ता। परन्तु आपको एक को ईष्ट मानना पड़ेगा तभी आपका जुड़ाव होगा अन्यथा आपका जुड़ाव अधूरा रहेगा।

मैं आपको अपनी बात बताता हूँ। मैं गीता परिवार में होने के कारण पूरे दिन में एक हज़ार बार तो जय श्री कृष्णा बोलते ही हूँ, मैं अपने साथ कृष्ण जी की फोटो लगाता हूँ। परन्तु मेरे ईष्ट श्रीराम हैं। मैं जब जय श्री कृष्ण बोलता हूँ, तब भी मेरा भाव राम जी से ही है। चाहे दिन में कितनी भी बार जय श्री कृष्णा बोलता हूँ परन्तु मेरे मन में भक्ति तो श्री राम की ही है तो इससे क्या फर्क पड़ता है। मैं किसी को भी ईष्ट बनाऊँ, यह किसी की प्रेरणा से नहीं होगा, यह बिल्कुल पर्सनल है और एक दिन आपको खुद ही पता चल जाएगा। यदि मैं आपसे पूछूँ कि आपको अंगूर अच्छा लगेगा कि आम अच्छा लगेगा। यह आपको ही पता चलेगा किसी और को नहीं। दोनों में से किसको क्या अच्छा लगेगा, यह सब की व्यक्तिगत बात है। यह सबके लिए एक जैसा नहीं हो सकता। दोनों फल सामने रखे हैं और मुझे कौन सा खाना है यह सब के लिए अलग-अलग है। अब भगवान से प्रार्थना कीजिए तब आपको अपने ईष्ट देव का ज्ञान हो जाएगा।

प्रश्नकर्ता - सुधा दीदी
प्रश्न - अभी तक पिछले पचास वर्ष से मेरे घर में रामचरितमानस की ही गङ्गा बही है। मैं हिन्दी की टीचर रही हूँ, परन्तु अब गीता जी पढ़ रही हूँ, तो इन संस्कृत के शब्दों के अर्थ मुझे कब तक समझ में आएगे?
उत्तर - धीरे-धीरे आने लगेंगे नहीं तो आप गीता प्रेस की अर्थ सहित गीता खरीद लें। इसमें एक-एक संस्कृत शब्द का अर्थ दिया हुआ है।

प्रश्नकर्ता - विशाल भैया
प्रश्न - मैं यह मानता हूँ कि हमारा जो भी जन्म हुआ है यह पिछले जन्मों के कर्म के अनुसार हुआ है, परन्तु इतिहास में पढ़ते हैं कि पूर्व में बहुत ही बड़े-बड़े ज्ञानी लोगों का जन्म हुआ है तो उनका जन्म कैसे हुआ?
उत्तर - हमें जन्म कैसे मिलता है इसके अनेक कारण हैं। जैसे मैंने बहुत पुण्य के तो उनका फल भोगने के लिए मैं स्वर्गलोक

जाऊँगा, पुण्य समाप्त होने पर मैं वापस मृत्यु लोक में आऊँगा। मैंने बहुत पाप किए,तो पाप भोगने के लिए मैं अनेक योनियों में जाऊंगा। जैसे कोई कुत्ता बनेगा, घोड़ा बनेगा, पेड़ बनेगा, पहाड़ बनेगा और जब मेरे पाप समाप्त हो जाएँगे तो मैं फिर वापस मनुष्य बन जाऊँगा। कोई चाहे कितने ही वर्ष देवता योनि में रह ले परन्तु वापस मनुष्य बनना पड़ेगा जब तक मोक्ष प्राप्त न हो जाए परन्तु पुनः जन्म और मृत्यु का चक्र चलता रहेगा इसलिए चौरासी लाख योनियों के बाद मनुष्य योनि तो अवश्य ही मिलेगी।

चाहे कितनी भी योनियों में जन्म हो जाए, परन्तु मनुष्य योनि तो होनी ही होनी है। मान लीजिए कुत्ता आपको काट ले तो उसको पाप नहीं लगता। परन्तु मनुष्य को पाप और पुण्य मिलता है। यह कर्म योनि है। यहाँ आप अपने आप को देवता बना सकते हैं और अपने आप को पशु बना सकते हैं,यह आपके अपने हाथ में है। आप अपने को मनुष्य और पशु योनि से मुक्त करके देवता के रूप में भी निवास कर सकते हैं, मनुष्य को भगवान ने असीमित शक्ति दी है वह जैसा चाहे वैसा बन सकता है। इतनी बड़ी ताकत केवल मनुष्य योनि में है।

हमें हमेशा पता होता है कि हमें क्या करना चाहिए लेकिन कई बार हम उस सविवेक को दबा देते हैं क्योंकि भगवान ने विवेक शक्ति सबको देकर भेजी है। क्या गलत है क्या सही है यह एक पाँच वर्ष के बालक को भी पता होता है, सही करना और गलत करना यह अस्सी वर्ष वाले को भी अपने विवेक से करना है। पाँच वर्ष की अवस्था में भी सही, गलत का बोध हो जाता है परन्तु हम गलत करते रहते हैं और सही को टालते रहते हैं क्योंकि करोड़ों जन्मों के संस्कारों के कारण हमारी वृत्तियां बनती हैं, उसी के कारण तमोगुण, रजोगुण और सतोगुण का निर्माण होता है। आप के विवेक और कर्म से ही आपके भाग्य का निर्माण होता है।

प्रश्नकर्ता - गीता जी
प्रश्न - मेरे बच्चे बड़े हैं मैं उन्हें कैसे शिक्षा दूँ कि क्या गलत है और क्या सही?
उत्त र- अब वह समय निकल गया है, यह शिक्षा सिर्फ चौदह वर्ष की आयु तक की दी जा सकती है। छ: वर्ष से चौदह वर्ष तक की आयु में ही हमें बच्चों को शिक्षा देने का अधिकार है, उसके बाद तो वह अपने अनुसार ही कार्य करता है। बाद में आप उसको केवल अपने आचरण से प्रेरणा दे सकते हैं कि देखो यह सही है, आप कह सकते हैं कि मैं गीता पढ़ती हूँ तो मुझे क्रोध नहीं आता है तो आपको देखकर उसके मन में यह भाव आ सकता है। बहुत ज्यादा टोकने से भी प्रतिरोध का भाव आता है। अपने जीवन को ऐसा बढ़िया उदाहरण बनाइए तो सब लोग ऐसे ही करेंगे।

अंत में सभी से 23 दिसंबर को गीता जयन्ती अपने-अपने स्थान पर मनाने के लिए प्रोत्साहित किया गया। श्री कृष्ण वन्दना और हनुमान चालीसा के पाठ के साथ आज के सत्र का समापन हुआ।

हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

https://vivechan.learngeeta.com/feedback/

विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!
हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचे। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

जय श्री कृष्ण !

हर घर गीता, हर कर गीता!

आइये हम सब गीता परिवार के इस ध्येय से जुड़ जायें, और अपने इष्ट-मित्र -परिचितों को गीता कक्षा का उपहार दें।

https://gift.learngeeta.com/

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों कि यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करे।

https://vivechan.learngeeta.com/

|| गीता पढ़े, पढ़ायें, जीवन में लाये ||

||ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ||